एम० ए० (हिन्दी) M: 9204396227 डॉ० अनिरुद्ध प्रसाद
I सेमेस्टर III पत्र हिन्दी विभाग
महाराजा कॉलेज, आरा।

प्रश्न: सिद्ध कीजिए तुलसीदासजी केवल कवि ही नहीं, समाज को उन्नत करने वाले लोकनायक भी थे।

उत्तर

महात्मा बुद्ध की तरह तुलसीदास जी भी लोकरक्षण धर्म का पालन करने वाले एक महान नायक थे। उनका समन्वयकारी रूप रामचरित मानस के प्रत्येक स्थान पर दृष्टिगोचर होता है। जिस प्रकार बुद्ध ने समाज की विषम परिस्थितियों में लोकधर्म के तत्व को अपनाकर समाज में समन्वय की स्थापना की, उसी प्रकार तुलसीदासजी ने अपनी भक्ति की अमृतधारा को बहाकर विद्वेष की अग्नि को शांत करने का प्रयत्न किया। वस्तुत: तुलसीदास ने जिन परिस्थितियों में समाज के रंगमंच पर आकर समन्वय, साधना और बलिदान के बल पर विरोधी शक्तियों को परास्त करने का काम किया, वह अतुलनीय है।

तुलसीदास ने धर्म में फैले सम्प्रदायों के नाड़ी चक्र को ध्यान से देखा था। शिव के भक्त राम का विरोध करते थे और रामभक्त शिव का। शैव और वैष्णवों के बीच एकता स्थापित कर उन्होंने लोकनायक की तरह द्वेष और ईर्ष्या की खाई को पाटने का काम किया। उन्होंने रामचरित मानस में राम मुख से, कहलवाया है — "शिवद्रोही मम दास कहावा
सो नर मोहे सपने नहीं भावा।"

केवल इस पंक्ति ने परंपरागत रूप से चली आ रही शैवभक्त और राम-भक्त के बीच शत्रुता को कम करने में मदद पहुँचायी। वास्तव में इन दो शक्तियों का समन्वय अपने आप में महत्वपूर्ण है। तुलसीदास ने वैष्णव मत का इतना प्रचार किया कि उसमें शैव, शाक्त और पुष्टिमार्ग सरलता से सम्मिलित हो गए। साहित्य सृजन में तुलसीदास लोकहित की भावना को प्रमुख स्थान देते थे। अपनी कलाकृतियों में

उन्होंने भाषा का समन्वित और समस्त रूप का प्रयोग किया। जिस समय तुलसीदास ने साहित्य की रचना की, उस समय चारण काल, के वीरगाथात्मक एवं प्रेमकाव्य लिखे जाते थे। संत काव्य में मुसलमानी प्रभाव अधिक था। इन सभी शैलियों का समन्वय तुलसीदास जी ने अपने काव्य में किया।
उन्होंने चारणों की छप्पय शैली, कबीर का दोहा और जायसी के दोहा-चौपाई की शैली का सम्मिश्रण अपनी कविताओं में किया।

तुलसी ने रामचरितमानस की रचना करने में भी साहित्य और धर्म की भाषा संस्कृत को छोड़कर लोकभाषा अवधि को स्वीकार किया। उस समय पंडित लोग लोक भाषा में रचना करना अपना अपमान समझते थे। तुलसीदास ने इस भावना को जाना और उन्होंने इसके प्रतिकार स्वरूप जन-भाषा में अपनी रचना प्रस्तुत की। इसके विरोध में कुछ पंडितों ने उन्हें जान से मारने की कोशिश की, किंतु तुलसीदास लोकहित के लिए अडिग रहे और भक्ति की उस अप्राप्य मणि को सबके लिए उपलब्ध करवा दिया। (रामचरितमानस) आज भी लोकमानस को जागृत करने वाला सबसे महत्वपूर्ण ग्रंथ है।

लोक इच्छा की भावना को ध्यान में रखकर तुलसीदास ने शृंगार वर्णन में भी संयम बरता। वे मर्यादा का उल्लंघन नहीं करते हैं। उनका दाम्पत्य-प्रेम उद्दाम न होकर संयमित है। शृंगार और प्रेम का जितना संयत और लोकहितकारी रूप तुलसी के काव्य में आया है, वैसा विश्व साहित्य में दुर्लभ है। वे सीता को राम का दर्शन अंगूठी के नग के द्वारा करवाते हैं उनका मिलन कृष्ण के भाँति प्रत्यक्ष नहीं होता, वरन उसमें भी मर्यादा की सीमा निर्धारित है। इसी प्रकार मार्ग में वे ग्राम वधुओं से कहलवाते हैं — चित्ते तुम त्यों हमरे मन मोहैं, ये साँवरे से सखि रावरे को हैं। सीता का राम की ओर कटाक्षपात इस प्रश्न का उत्तर मर्यादा की परिधि में ही दे देता है।

तुलसी से पूर्व कृष्ण भक्त कवियों ने कृष्ण का जो रूप प्रस्तुत किया है उसमें मर्यादा की सीमा एवं संयम नहीं दिखलाई देता है, जैसा की तुलसीदास की कविताओं में है। सूर की तरह कुछ भक्त कवियों ने कुछ ऐसे पदों की रचना की है जिसमें अश्लीलता की भावना व्यक्त होती है —

झूठे मोहिं लगावत ग्वारी।
खेलत तें मोहि बोल लियो है दोनो भुज धरि दीन्हीं अंकवारी।

तुलसी में इस प्रकार की अस्वाभाविक भावुकता नहीं है। उन्होंने सामाजिक हित के लिए समुचित मर्यादा का पालन किया। इसके अतिरिक्त उन्होंने राम में शील, शक्ति और सौन्दर्य तीनों का समन्वय उपस्थित किया। कृष्ण में केवल स्वरूप ही निखर सका वह भी विशृंखलता एवं असंयम की प्रवृत्ति को बढ़ाने वाला। परन्तु राम का सौन्दर्य सौन्दर्य और शक्ति वाला था, जिससे मानव समाज कल्याण कर सका। जहाँ सूर ने श्रृंगार रस की धारा प्रवाहित की और भक्तों को प्रेम की धारा में रस-स्नान कराया और भक्तों के हृदय को प्रेम-रस से भर दिया। वहीं तुलसी के मानस में भक्त किसी भी रसधारा अपनी रुचि के अनुसार अपनी पिपासा को शांत कर सकता है। उनके काव्य में नवों रसों की सृष्टि हुयी है जो आनंददायी और सौंदर्य-प्रदायनी है।

तुलसीदास एक महान स्रष्टा थे। साहित्य के लिए मानव हृदय की गहरी भावुकता की आवश्यकता होती है, जो उन्हें सहज प्राप्त थी। वे भावों के पुजारी थे, इसी कारण उन्होंने हृदय के अंतःस्थल के चित्र इतने उत्तम सुन्दर ढंग से उकेर सके। उनका सारा काव्य समन्वय की विराट प्रतिमा है। लोक और शास्त्र का समन्वय, गार्हस्थ्य और वैराग्य का समन्वय, भक्ति और ज्ञान। ब्राह्मण और चाँडाल, तथा भाषा और संस्कृति का समन्वय उनके काव्य का मूलाधार है। माया के अंधकार में जिस प्रकार पतित मानव अपने जीवन यात्रा के पथ को भूल जाता है, वहीं तुलसी काव्य उनके उनके रास्ते को प्रशस्त करने लगता है। P.T.O

Scanned with CamScanner

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने तुलसीदासजी के संबंध में ठीक ही लिखा है —

'जिस युग में तुलसी का जन्म हुआ, उस युग में समाज के आगे कोई ऊँचा आदर्श नहीं था। समाज के उच्च स्तर के लोग विलासिता के पंक में उसी तरह मग्न थे जिस प्रकार कुछ वर्ष पूर्व सूरदास ने देखा था। निम्न स्तर के दरिद्र लोग अशिक्षित और रोगग्रस्त थे। वैराग्य धारण करना एक साधारण-सी बात थी। घर की संपत्ति नष्ट होने पर अथवा स्त्री की मृत्यु होने पर ढँकार में कोई आकर्षण न होने पर संन्यास धारण कर लिया जाता था। 'अलख' की आवाज गर्म थी, यद्यपि ये अलख लखने वाले कुछ भी नहीं लिख सकते थे। निम्न स्तर की कुछ जातियों में कई पहुँचे हुए महात्मा हो गए थे। जिनमें आत्म-विश्वास का संचार हो गया था, परंतु शिक्षा और संस्कृति के अभाव में इसी आत्मविश्वास ने गर्व का रूप धारण कर लिया। समाज में धन की मर्यादा बढ़ रही थी पंडित और ज्ञानियों का समाज के साथ कोई सम्पर्क न था। संपूर्ण देश ऐसा विशृंखल, परस्पर विछिन्न आदर्शहीन और बिना लक्ष्य के हो रहा था। ऐसे समय में एक ऐसी आत्मा की आवश्यकता थी जो इन परस्पर विछिन्न और दूर विभ्रष्ट टुकड़ों में योग-सूत्र स्थापित कर सके। तुलसीदास आविर्भाव ऐसे ही समय में हुआ।'

इस प्रकार निःसंदेह कहा जा सकता है कि तुलसीदास केवल कवि ही न थे। उन्होंने लोक-धर्म का पालन करते हुए मर्यादा में रहकर लोक कल्याण के लिए सभी समुदायों के बीच समन्वय स्थापित कर अंधकूप में पड़े समाज को एक नई राह दिखलाने का प्रयत्न किया। सचमुच में, वे एक लोकनायक थे।

Scanned with CamScanner